REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 1 | OCTOBER - 2018

बहुजन आंदोलन के प्रणेता कांशीराम

डॉ. पी. एस. चंगोले
वाणिज्य विभाग प्रमुख, धनवटे नॅशनल कॉलेज, नागपूर

संक्षेप

कांशीराम ने बहुजनो की चेतना के नए स्तरों को टटोला। उनकी मन वेदना में बैठने का प्रयास किया। वेदना के साथ जुडकर उन्होने बहुजन की विचारधारा एवं कल्पना को स्वाधीन किया यानी नयी विचारधारा ने बहुजन की कल्पना को नई दिशाओं में विकसित होने का अवसर दिया। इस लिए यह विद्रोही भावना संगठित होकर, एक नये समाज के निर्माण की क्षमता रखती। पर इस विद्रोह का एक नकारात्मक परिणाम यह है कि सवर्ण वर्ग ने अपनी शक्ति को अपनी जातीय स्थिति को और संगठित किया और उसका यह प्रयत्न हो गया कि समाज में हर तरह के विकास, हर तरह के सुधार का रास्ता बन्द कर दिया जाए साथ ही बहुजनों को जो विशेषअधिकार पहले से प्राप्त है, उनको भी समाप्त किया जाय। आरक्षण के विरूध्द आन्दोलन का चरम एवं तीव्र विकास, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।[9]

कुछ लोग इतिहास पढ़ते है, कुछ लोग इतिहास लिखते है लेकिन कुछ लोग इतिहास रचते है। यह अलग बात है कि कई बार इतिहास के लेखक छोटी–मोटी उपलब्धियां पानेवालों को तो महानायक के रूप में दर्ज कर दें और असली नायको को उपेक्षित या विस्मृत कर दें। कम से कम भारत के इतिहास में यह दुराग्रह खूब देखने को मिलता है। बहुजन समाज में अनेक महान शासक, शूरवीर, सेनापति और समाज परिवर्तक महापुरूष हुए है किन्तु हजारों साल के भारतीय इतिहास में बहुजनों की कही कोई महत्वपूर्ण उपलब्धि या भूमिका दर्ज नही है। उनकी तमाम उपलब्धियों को नजरअन्दाज कर दिया गया है। ''यथार्थतः बहुजन समाज के लोग खास तौर से अनसूचित जाती के लोग इतिहास से प्रायः बहिष्कृत रहे है।''[1] कारण इतिहास लेखन का कार्य शिक्षा पर काबिज मनुवादी मानस द्वारा किया गया है जिसकी प्रवृत्ति बहुजन विरोधी रही है।

कांशीराम एक ऐसे बहुजन नायक रहे है जिन्होंने न केवल इतिहास रचा अपितु इतिहास को गौरव और गरिमा प्रदान की। अपने गहन कल्याणकारी चिन्तन, उच्च नैतिक आचरण और महान संघटनात्मक कार्यो से उन्होंने महानता को नई परिभाषा और आयाम दिया। कुछ लोग किसी खास वर्ग, जाति या परिवार में जन्म लेने के कारण महान माने जाते है, कुछ लोगों पर महानता थोप दी जाती है लेकिन कुछ लोग अपने कार्यों और व्यवहार से महान बनते है। कांशीराम ऐसे ही महापुरूष है जो अपने कार्यों और व्यवहार से महान बने।

कांशीराम के मार्गदर्शन में मै बहुजन समाज के आंदोलन में 1984 से सक्रीय रहा और आज भी हूं। उनके दिशनिर्देशन में बहुजन समाज बनाने की प्रक्रिया को महाराष्ट्र, म.प्र., आ.प्र., गोवा आदि राज्यों में कार्य करने का सुअवसर उन्होंने मुझे दिया। इस दौरान बहुजन समाज की भावना कांशीराम के सम्बन्ध में सकारात्मक कम और नकारात्मक ज्यादा दिखी। इसका मुख्य कारण भारत में प्रकाशित पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित नकारात्मक लेख या समाचार आदि को आधार मानकर बनाई गई मानसिकता प्रमुखता से देखने को मिली।

कांशीराम के सर्व समाज के हित के विचारोसे विस्तृत परिचय प्राप्त होने तथा समग्र रूप में उनकी देन अपेक्षाकृत समग्रसमाज के लिए अभी भी अज्ञात है। समाचार पत्रों में उनकें राजनैतिक भाषण ही सारसंक्षेप्त में यदाकदा आते रहते थे। यह कांशीराम की विचारों की विशिष्ट शैली को

स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त नही है। उनकी शैली में ऐसे वक्तव्यों का अम्बार है जिनका विस्तृत विश्लेषण आवश्यक है। उनकी विचारधारा वर्तमान में यथार्थवादी और भविष्य में आदर्शवादी रही है। असमानता उनकी राजनिती थी और समानता उनका आदर्श।

कांशीराम के विचारमात्र कुछ व्यक्तियों के विचार नही है बाल्कि एक प्रस्थिती समुह के सदस्यों के विचार है। जिनमें एक चेतन उद्देश्य निहीत है। कांशीराम ने फुले (1827–1890) राजर्षी शाहू महाराज (1891–1956) पेरियार (1879 – 1974) डा. अम्बेडकर (1891 – 1956) इनके समाज परिवर्तक आंदोलन को संपूर्ण भारत में गतीमान करने का महान कार्य 1971 से पुना से शुरू किया। जहा महात्मा ज्योतिराव फुले ने 42 साल तक मनुवादी समाज व्यवस्था के खिलाफ आजीवन संघर्ष किया था। ''पुना के यरवडा कारागर में महात्मा गांधी के साजिशपूर्ण अनशन के कारण डॉ.अम्बेडकर को 'पुना–करार' पर मजबुरी में पुना में ही हस्ताक्षर करने पडे थे'' ।[2]

अनुसंधान समस्या की पृष्ठभूमि

कांशीराम के कार्यों की सही जानकारी समाज के सामने न होने के कारण उनके बारे में गलत मानसिकता रखने वाले लोगों की तादाद बहोत बडी है। इस वास्तविकता को नजरअन्दाज नही किया जा सकता। कांशीराम के विचारों की स्वीकृति का आधार क्या है। वे क्या करना चाहते थे ? मनुवादी समाज व्यवस्था के खिलाफ उनका दृष्टिकोन क्यो बना ? सामाजिक तथा राजनीतिक लोकतन्त्र को उन्होंने अपने आंदोलन का आधार क्यो बनाया ? आदि प्रश्नोंपर अध्ययन होना जरूरी है।

कांशीराम का सारा दृष्टिकोन मनुवादी समाज व्यवस्था के विरोध से संबंधित है। वह केवल ब्राह्मणी समाज व्यवस्था में निहित विषमताओं को ही नही अपितु इसमें दलित–शोषित समाज की स्थिति को भी, बहुजन समाज के सामान्य जनों तक विशेष रूप से ग्रामिण क्षेत्रों के लोगों तक वे ले गये। जो विचार अनुसूचित जाती के बुद्धिजीवी लोगों तक सीमित था, कुछ अपवाद को छोडकर, उसे उन्होंने एक नये धरातक पर विकसित कर लिया । ''यह तथ्य उत्तर भारत के लिए लगभग यथार्तपूर्ण है, क्योंकि महाराष्ट्र और दक्षिण के राज्यों में ब्राह्मणवाद के विरूध्द अनेक आन्दोलन हुए, पर उत्तर भारत में ऐसा लगभग न के बराबर ही रहा। कांशीराम की विचार शैली ने उत्तर भारत को प्रभावित कर दिया'' ।[3]

कांशीराम समाज परिवर्तक बहुजन आन्दोलन के सिद्धान्तकार, संगठन के निर्माण कर्ता, बहुजनों को संगठित करने वाले उनके मार्गदाता रहे। उत्तर भारत के बहुजन समाज को राजनैतिक रूप से संगठित करने का बहुत बडा श्रेय कांशीराम के नेतृत्व को जाता है। बहुजन समाज में जो विभिन्न जातियां है उनमें राजनीतिक चेतना उन्होंने ही जगायी। आजादी के पचास वर्ष बीत जाने के बाद भी बहुजन समाज लाचार एवं गुलाम क्यो है ? इस सवाल को संपूर्ण भारत में आंदोलन चलाकर उन्होंने ही उठाया।

''कांशीराम का आन्दोलन आधुनिक युग के ब्राह्मणवाद विरोधी आन्दोलन का परिणाम है और समय के अनुसार नई दिशा में नया आन्दोलन भी रहा है। उनका आन्दोलन एक पुल की तरह है जो समय की नदी के उपर बना दिया गया है।''[4] यह पुल समकालीन आन्दोलन को आधुनिक युग (म.फुले से प्रारंभ – 1848) से जोडता है।

म. फुले, राजर्षी शाहू, पेरियार तथा डॉ.अम्बेडकर के आन्दोलन की श्रृंखला में कांशीराम अन्तिम व्यक्ति के आन्दोलनकर्ता है और समकालीन युवा पीढी के वह प्रथम संघर्ष कर्ता है। युवा पीढी ही उनके नये दृष्टिकोण का संवाहक है। बहुजनवादी नए दर्शन, चिंतन पर कांशीराम ने कार्य किया है। फुले–शाहू–पेरियार–अम्बेडकर के बाद रिक्त हुआ आंदोलन के नेतृत्व का जिम्मा कांशीराम ने संभाल लिया था। ''यहां यह सवाल उठता है कि कांशीराम ने ही आखिर क्यो इस संगठन को बनाने में रूचि ली। करोडों लोगों में कोई बिरला ही धधकती हुई आग में कूदता है। हालाकि यह बात अपने–आपमे सही भी है। क्योंकि अपने पिता से विप्लवी का खिताब लेने वाले युवा कांशीराम ने 'खवासपूर' को फिर कभी पीछे मुडकर नही देखा था।''[5]

आजादी के बाद भारत के दलित–शोषित समाज के बुध्दिजीवि कर्मचारीयों का बडे पैमाने पर उदय हुआ। वे आरक्षण की फसल थे। ''संविधान में डॉ.अम्बेडकर ने एस.सी., एस.टी., तथा अन्य पिछडा वर्ग के लोगों के लिए जो प्रावधान किये थे उसका नतिजा यह निकला की संपूर्ण भारत में लाखों की संख्या में दलित–शोषित

समाज के कर्मचारियों का निर्माण हो सका।''[6] वे सब कर्मचारी सामाजिक आंदोलन के 108 वर्ष के निरंतर संघर्ष का परिणाम थे। जैसा कि स्वयं कांशीराम लिखते है। ''इस वर्ग के मनोभावों को ध्यान में रखते हुए और इस वर्ग की सामाजिक जिम्मेदारी को देखते हुए पुणे में हम कुछ लोगों ने इन शिक्षित कर्मचारियों को संगठित करने का निर्णय लिया, जिसका ध्येय है समाज को दासता से मुक्ति दिलाना। उसी समय शिक्षित कर्मचारियों को अखिल भारतीय स्तर पर और पक्के तौर पर संगठित करने का भी निर्णय लिया गया कि ऐसे संगठन के माध्यम से अपने विचार को मूर्त रूप प्रदान किया जाए''[7]

कांशीराम द्वारा चलाये गए समाज परिवर्तक आंदोलन के कारण सवर्ण जाति को अपनी जातीय विरासत को फिर से पहचानने का अवसर दिया। इस विरासत के सूत्रधारों में, मनु का अपना विशिष्ट स्थान रहा है। समकालिन दो प्रवृत्तियों ने जातिवादी भावना को और दृढ किया। मंडल और कमंडल (मन्दिर) इन दोनों की पृष्ठभूमि जातीय चेतना की भावना रही जातीय चेतना को भाईचारे के आधार पर पुनर्जाग्रित किया कांशीराम ने। कांशीराम का यह सिध्दांत बहुजन का जातीय सिध्दान्त भी है। उत्तर भारत के बहुजनों को राजनैतिक रूप से संगठित करने का बहुत श्रेय उस प्रेरणा को है जो उन्हें इस सिध्दान्त से प्राप्त हुई। इस सिध्दान्त ने बहुजनो के अन्दर विभाजन को भी कम करके, उनमें जातीय भाव भी जागृत किया।

कांशीराम के विचारों की स्वीकृति का आधार मजबूत है। यह उस सामाजिक संघटन की देन है जिनकी ये व्यक्ति एक भाग है। नयी ब्राह्मणी चेतना की मॉग है कि देश को संकट की स्थिति से उबारने के लिए ब्राह्मणी व्यवस्था अथवा मनु और राम को फिर से आना चाहिए अर्थात फिर से स्थापित होना चाहिए। इसका मतलब यह है कि सवर्ण वर्ग के या ब्राह्मणवादी व्यवस्था के प्रभुत्व से भारत अभी निकला नही है। लोकतांन्त्रिक एवं धर्मनिरपेक्ष व्यवस्था स्थापित हो चुकी है किंतु अब भी सवर्ण वर्ग शासक – प्रशासक बना हुआ है। उसके प्रभाव से बहुजनो में अभी भी हीन जातीय बोध विद्यमान है, इस लिए जो व्यापक सांस्कृतिक एवं राजनीतिक विकास के सिध्दान्त ने बहुजनों में एक नई मनोवैज्ञानिक दिशा की ओर अग्रसर किया है।

कांशीराम दोनों के बीच बनी हुई दूरी को कम करने में प्रयासरत थे। कांशीराम के आन्दोलन में प्रारम्भ में उनमें जागरूक अ.जा. के लोग ही शामिल थे और उनमें जुझारू संघर्षमयी भावना रही व सब मात्र एक दबाव गुट तक ही अपने को सीमित रहे । आन्दोलन के अगले चरण में (डी.एस.–4 के गठन से) जन सामान्य भी जुडने लगा विशेषकर गरीब शिक्षित विद्रोही अ.जा. के युवकों के जुडने से, आन्दोलन की भाषा व शैली बदली, आक्रमक राजनीति सामने आयी,, अब कांशीराम का आन्दोलन ब्राह्मणी व्यवस्था से मुक्ति का आन्दोलन, समान सहभागिता की प्राप्ति के संघर्ष का आन्दोलन, सीधे और स्वतन्त्र हैसियत से सत्ता पर नियन्त्रण का आन्दोलन तथा बैलेट और बुलेट का आन्दोलन हो गया। बहुत से लोगों (नवयुवक विशेषतौर पर) को उपरोक्त मान्यता ने ही कांशीराम के आन्दोलन की ओर आकृष्ट किया और आज भी कर रहा है।

कांशीराम ने आंबेडकर को अपना गुरू बनाया और जगजीवन राम की विरासत को ठुकरा दिया। कांशीराम ने भारतीय राजनीति को 'मनुवाद' नाम की नई धारणा दी। उन्होंने आंबेडकर का एक ही संदेश याद रखा कि राजसत्ता 'चाबियों की चाबी है' और राजनीति होनी चाहिए।'[8] कांशीराम समतामूलक नागरिक समाज बनाने के आंबेडकरवादी कार्यभार को और 'चाबियों की चाबी' को साधने में जुट गए।

उन्होंने आरक्षण के माध्यम से पनपी बहुजन अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के कर्मचारियों को अपनी राजनीति का मुख्य जरिया बनाया। अर्थात सबसे पहले उन्होंने बहुजनों के प्रभुवर्ग को अपने साथ लिया। कांशीराम अपनी नही बल्कि ब्राह्मण प्रभुत्व की राजनीति से निकली परंपराओं और मर्यादाओं को उल्लंघन कर रहे थे।

कांशीराम ने बहुजनो की चेतना के नए स्तरों को टटोला। उनकी मन वेदना में बैठने का प्रयास किया। वेदना के साथ जुडकर उन्होने बहुजन की विचारधारा एवं कल्पना को स्वाधीन किया यानी नयी विचारधारा ने बहुजन की कल्पना को नई दिशाओं में विकसित होने का अवसर दिया। इस लिए यह विद्रोही भावना संगठित होकर, एक नये समाज के निर्माण की क्षमता रखती। पर इस विद्रोह का एक नकारात्मक परिणाम यह है कि सवर्ण वर्ग ने अपनी शक्ति को अपनी जातीय स्थिति को और संगठित किया और उसका यह प्रयत्न हो गया कि समाज में हर तरह के विकास, हर तरह के सुधार का रास्ता बन्द कर दिया जाए साथ ही बहुजनों को जो

विशेषअधिकार पहले से प्राप्त है, उनको भी समाप्त किया जाय। आरक्षण के विरूध्द आन्दोलन का चरम एवं तीव्र विकास, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।[9]

कांशीराम द्वारा अपील यद्यपि सभी लोगों (बहुजन समुदाय) से की जाती थी फिर भी स्पष्ट था कि वह सबसे पहले नवयुवकों को प्रभावित करती थी।

बी.एस.पी. उत्पीडित वर्ग की राजनीति के रूप में प्रकट हुई। वह अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था के विरूध्द शोषित जनसामान्य के स्वयं स्फूर्त की एक अभिव्यक्ति है।

अनुसंधान की उपयोगिता

कांशीराम का यह समीक्षात्मक अध्ययन सामाजिक तथा राजनीतिक लोकतंत्र प्रस्थापित करने के उनके प्रयास का उत्तर खोजने के लिए कुछ सुराग देने का काम कर सकता है। उनके व्यक्तित्व सब मात्र एक दबाव गुट तक ही अपने को सीमित रहे । आन्दोलन के अगले चरण में (डी.एस.–4 के गठन से) जन सामान्य भी जुडने लगा विशेषकर गरीब शिक्षित विद्रोही अ.जा. के युवकों के जुडने से, आन्दोलन की भाषा व शैली बदली, आक्रमक राजनीति सामने आयी,, अब कांशीराम का आन्दोलन ब्राह्मणी व्यवस्था से मुक्ति का आन्दोलन, समान सहभागिता की प्राप्ति के संघर्ष का आन्दोलन, सीधे और स्वतन्त्र हैसियत से सत्ता पर नियन्त्रण का आन्दोलन तथा बैलेट और बुलेट का आन्दोलन हो गया। बहुत से लोगों (नवयुवक विशेषतौर पर) को उपरोक्त मान्यता ने ही कांशीराम के आन्दोलन की ओर आकृष्ट किया और आज भी कर रहा है।

कांशीराम ने आंबेडकर को अपना गुरू बनाया और जगजीवन राम की विरासत को ठुकरा दिया। कांशीराम ने भारतीय राजनीति को 'मनुवाद' नाम की नई धारणा दी। उन्होंने आंबेडकर का एक ही संदेश याद रखा कि राजसत्ता 'चाबियों की चाबी है' और राजनीति होनी चाहिए।'[8] कांशीराम समतामूलक नागरिक समाज बनाने के आंबेडकरवादी कार्यभार को और 'चाबियों की चाबी' को साधने में जुट गए।

उन्होंने आरक्षण के माध्यम से पनपी बहुजन अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के कर्मचारियों को अपनी राजनीति का मुख्य जरिया बनाया। अर्थात सबसे पहले उन्होंने बहुजनों के प्रभुवर्ग को अपने साथ लिया। कांशीराम अपनी नही बल्कि ब्राह्मण प्रभुत्व की राजनीति से निकली परंपराओं और मर्यादाओं को उल्लंघन कर रहे थे।

कांशीराम ने बहुजनो की चेतना के नए स्तरों को टटोला। उनकी मन वेदना में बैठने का प्रयास किया। वेदना के साथ जुडकर उन्होने बहुजन की विचारधारा एवं कल्पना को स्वाधीन किया यानी नयी विचारधारा ने बहुजन की कल्पना को नई दिशाओं में विकसित होने का अवसर दिया। इस लिए यह विद्रोही भावना संगठित होकर, एक नये समाज के निर्माण की क्षमता रखती। पर इस विद्रोह का एक नकारात्मक परिणाम यह है कि सवर्ण वर्ग ने अपनी शक्ति को अपनी जातीय स्थिति को और संगठित किया और उसका यह प्रयत्न हो गया कि समाज में हर तरह के विकास, हर तरह के सुधार का रास्ता बन्द कर दिया जाए साथ ही बहुजनों को जो विशेषअधिकार पहले से प्राप्त है, उनको भी समाप्त किया जाय। आरक्षण के विरूध्द आन्दोलन का चरम एवं तीव्र विकास, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।[9]

कांशीराम द्वारा अपील यद्यपि सभी लोगों (बहुजन समुदाय) से की जाती थी फिर भी स्पष्ट था कि वह सबसे पहले नवयुवकों को प्रभावित करती थी।

बी.एस.पी. उत्पीडित वर्ग की राजनीति के रूप में प्रकट हुई। वह अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था के विरूध्द शोषित जनसामान्य के स्वयं स्फूर्त की एक अभिव्यक्ति है।

मनुवादी व्यवस्था फिर से स्थापित होनी चाहिए। भारत में प्रजातन्त्र एवं धर्मनिरपेक्ष व्यवस्था स्थापित होने के बावजूद अब भी भारत पर सवर्ण वर्ग का शासन बना हुआ है। यह कैसे संभव हुआ है। इसका जवाब.कांशीराम देते है, ''यह मनुवादी समाज व्यवस्था का प्रभाव है।'[15]

उदारतावादी रवैया कांशीराम की बेमिसाल राजनीति के प्रति अपनापन ही पैदा कर सकता है। अवसरवाद को ही रणनीति में परिवर्तित कर देने वाले कांशीराम का सच्चा राष्ट्रीय योगदान सर्वव्यापक है।

आज भी सवर्ण जाती के लोग संपूर्ण भारत के हिन्दुओंपर मानसिक तौर पर अपना नियंत्रण बनायें हुये है। मनुवादी शासकों के प्रभाव से बहुजन समाज में अभी भी हीन जातीय बोध विद्यमान है, उनमें अभी भी एक

स्वतंत्र प्रजातन्त्रीय शासन के अंतर्गत अपने वोट के अधिकार का निर्भिक प्रयोग करने का साहस नही पनप पाया है। ''मा.कांशीरामने यह वास्तविकता को बहोत नजरिक से अनुभव किया और उस स्थिती से निपटने के लिए दलित–शोषित समाज का राजनैतिक दल 'बहुजन समाज पार्टी' के नाम से 14/04/1984 को गठित किया' 16

बी.एस.पी. एक महत्वपूर्ण सामाजिक राजनीतिक शक्ति बन कर उभरी है। जिस पर बहुजन वर्ग अपने संघर्ष में भरोसा कर सकता है। अब राजनीति में दबे कुचले लोगों का भाग लेना सहज हो गया।

बहुत कम लोग ऐसे है जो नीचे उतरते है, जो झोपड़ियों और खेतों तक जाते है और बेसहारा बच्चों तक पहुंचते है। ये लोग विशाल मानव अस्तित्व के सही प्रतिनिधि यही हैं।

कांशीराम के चिंतन में जोर ब्राह्मणी व्यवस्था में निहित विषमता एवं उसमें बहुजनों की हीन स्थिति उच्च जातीय विशेषधिकार के साथही सत्ता प्राप्ति करने हेतु संगठित बहुजन समाज के निर्माण पर भी। इस लक्ष्य हेतु वे चाहते थे कि बहुजन न केवल एक भाषा बोलने वाले (अपनी सरकार की स्थापना की भाषा) राजनीति द्वारा संबद्ध हो, एक दुसरे से भाईचारे की भावना से मिले और साथ रहें के रूप में।

इस संघर्ष से सामान्य बहुजनों को तभी लाभ होगा जब यह (संघर्ष) सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन से प्रारम्भ होकर राजनैतिक परिवर्तन तक जाय। फिर भी संघर्ष का लाभ यह होगा कि ''बहुजन लड़ना सीख जायेंगे।''

कांशीराम की दृष्टि में बहुजनों में गरीबी, अशिक्षा, एवं हीन स्थिति उनकी मनोवैज्ञानिक परतन्त्रता का आधार है और मनोवैज्ञानिक परतन्त्रता का आधार ब्राह्मणवाद, परम्परावाद इत्यादि में परिलक्षित होती है। इन समस्याओं का समाधान बहुजन सत्ता द्वारा ही सम्भव है।

कांशीराम के विचारों का मूल्यांकन जरूरी

कांशीराम के विचारों की स्वीकृति का आधार फुले – शाहू – पेरियार – अम्बेडकर की लोकतंत्रात्मक विचारधारा रही है। यह उस सामाजिक आंदोलन की देन है जिनकी ये आंदोलक एक भाग है।

कांशीराम के विचारो का इस दृष्टि से मूल्यांकन करना चाहिए की वे अपने समर्थको को क्या वचन देते थे, किन खतरों को बताते थे और समाज के अन्य समुदायो के साथ किस प्रकार के आचरणा को प्रोत्साहित करते थे। यानी उनमें किस प्रकार की चेतना का संचार कर रहे थे और उनकी विचारधारा एकसाधारण बहुजन शोषित व्यक्ति को किस प्रकार की प्रेरणायें देती थी।

कांशीराम समाज परिवर्तक बहुजन आन्दोलन के सिद्धान्तकार, संगठन के निर्माण कर्ता, बहुजनों को संगठित करने वाले उनके मार्गदाता रहे। उत्तर भारत के बहुजन समाज को राजनैतिक रूप से संगठित करने का बहुत बडा श्रेय कांशीराम के नेतृत्व को जाता है। बहुजन समाज में जो विभिन्न जातियां है उनमें राजनीतिक चेतना उन्होंने ही जगायी। आजादी के पचास वर्ष बीत जाने के बाद भी बहुजन समाज लाचार एवं गुलाम क्यो है ? इस सवाल को संपूर्ण भारत में आंदोलन चलाकर उन्होंने ही उठाया।

म. फुले, राजर्षी शाहू, पेरियार तथा डॉ.अम्बेडकर के आन्दोलन की श्रृंखला में कांशीराम अन्तिम व्यक्ति के आन्दोलनकर्ता है और समकालीन युवा पीढी के वह प्रथम संघर्ष कर्ता है। युवा पीढी ही उनके नये दृष्टिकोण का संवाहक है। बहुजनवादी नए दर्शन, चिंतन पर कांशीराम ने कार्य किया है।

पे बॅक टू दी सोसायटी

आजादी के बाद भारत के दलित–शोषित समाज के बुध्दिजीवि कर्मचारीयों का बडे पैमाने पर उदय हुआ। वे आरक्षण की फसल थे। ''संविधान में डॉ.अम्बेडकर ने एस.सी., एस.टी., तथा अन्य पिछडा वर्ग के लोगों के लिए जो प्रावधान किये थे उसका नतिजा यह निकला की संपूर्ण भारत में लाखों की संख्या में दलित–शोषित समाज के कर्मचारियों का निर्माण हो सका।''[17] वे सब कर्मचारी सामाजिक आंदोलन के 108 वर्ष के निरंतर संघर्ष का परिणाम थे। जैसा कि स्वयं कांशीराम लिखते है। ''इस वर्ग के मनोभावों को ध्यान में रखते हुए और इस वर्ग की सामाजिक जिम्मेदारी को देखते हुए पुणे में हम कुछ लोगों ने इन शिक्षित कर्मचारियों को संगठित करने का निर्णय लिया, जिसका ध्येय है समाज को दासता से मुक्ति दिलाना। उसी समय शिक्षित कर्मचारियों

को अखिल भारतीय स्तर पर और पक्के तौर पर संगठित करने का भी निर्णय लिया गया कि ऐसे संगठन के माध्यम से अपने विचार को मूर्त रूप प्रदान किया जाए''[18]

कांशीराम द्वारा चलाये गए समाज परिवर्तक आंदोलन के कारण सवर्ण जाति को अपनी जातीय विरासत को फिर से पहचानने का अवसर दिया। इस विरासत के सूत्रधारों में, मनु का अपना विशिष्ट स्थान रहा है। समकालिन दो प्रवृत्तियों ने जातिवादी भावना को और दृढ किया। मंडल और कमंडल (मन्दिर) इन दोनों की पृष्ठभूमि जातीय चेतना की भावना रही जातीय चेतना को भाईचारे के आधार पर पुनर्जाग्रित किया कांशीराम ने। कांशीराम का यह सिध्दांत बहुजन का जातीय सिध्दान्त भी है। उत्तर भारत के बहुजनों को राजनैतिक रूप से संगठित करने का बहुत श्रेय उस प्रेरणा को है जो उन्हें इस सिध्दान्त से प्राप्त हुई। इस सिध्दान्त ने बहुजनो के अन्दर विभाजन को भी कम करके, उनमें जातीय भाव भी जागृत किया।

कांशीराम के विचारों की स्वीकृति का आधार मजबूत है। यह उस सामाजिक संघटन की देन है जिनकी ये व्यक्ति एक भाग है। नयी ब्राह्मणी चेतना की मॉग है कि देश को संकट की स्थिति से उबारने के लिए ब्राह्मणी व्यवस्था अथवा मनु और राम को फिर से आना चाहिए अर्थात फिर से स्थापित होना चाहिए। इसका मतलब यह है कि सवर्ण वर्ग के या ब्राह्मणवादी व्यवस्था के प्रभुत्व से भारत अभी निकला नही है। लोकतांन्त्रिक एवं धर्मनिरपेक्ष व्यवस्था स्थापित हो चुकी है किंतु अब भी सवर्ण वर्ग शासक – प्रशासक बना हुआ है। उसके प्रभाव से बहुजनो में अभी भी हीन जातीय बोध विद्यमान है, इस लिए जो व्यापक सांस्कृतिक एवं राजनीतिक विकास के सिध्दान्त ने बहुजनों में एक नई मनोवैज्ञानिक दिशा की ओर अग्रसर किया है।

मुनवाद की नई धारणा

कांशीराम ने फुले–शाहू–पेरियार–आंबेडकर को अपना गुरू बनाया और जगजीवन राम की विरासत को ठुकरा दिया। कांशीराम ने भारतीय राजनीति को 'मनुवाद' नाम की नई धारणा दी। उन्होंने आंबेडकर का एक ही संदेश याद रखा कि राजसत्ता 'चाबियों की चाबी है' और राजनीति होनी चाहिए।'[19] कांशीराम समतामूलक नागरिक समाज बनाने के आंबेडकरवादी कार्यभार को और 'चाबियों की चाबी' को साधने में जुट गए।

उन्होंने आरक्षण के माध्यम से पनपी बहुजन अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के कर्मचारियों को अपनी राजनीति का मुख्य जरिया बनाया। अर्थात सबसे पहले उन्होंने बहुजनों के प्रभुवर्ग को अपने साथ लिया। कांशीराम अपनी नही बल्कि ब्राह्मण प्रभुत्व की राजनीति से निकली परंपराओं और मर्यादाओं को उल्लंघन कर रहे थे।

कांशीराम द्वारा अपील यद्यपि सभी लोगों (बहुजन समुदाय) से की जाती थी फिर भी स्पष्ट था कि वह सबसे पहले नवयुवकों को प्रभावित करती थी।

बी.एस.पी. उत्पीडित वर्ग की राजनीति के रूप में प्रकट हुई। वह अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था के विरूध्द शोषित जनसामान्य के स्वयं स्फूर्त की एक अभिव्यक्ति है।

सामाजिक तथा राजनीतिक लोकतंत्र के प्रवक्ता
आरक्षण कोई भीक नही वह देश के शासन और प्रशासन में
भागीदारी का संवैधानिक अधिकार है।

यह विचार संपूर्ण भारत में लोगोंतक पहुंचाने का कार्य कांशीराम ने आंदोलन के माध्यम से किया। कांषीराम सामाजिक तथा राजनीतिक लोकतंत्र के सबसे बडे प्रवक्ता के रूप में जाने जाते है। बी.एस.पी. एक महत्वपूर्ण सामाजिक राजनीतिक शक्ति बन कर उभरी है। जिस पर बहुजन वर्ग अपने संघर्ष में भरोसा कर सकता है। अब राजनीति में दबे कुचले लोगों का भाग लेना सहज हो गया।

बहुत कम लोग ऐसे है जो नीचे उतरते है, जो झोपड़ियों और खेतों तक जाते है और बेसहारा बच्चों तक पहुंचते है। ये लोग विशाल मानव अस्तित्व के सही प्रतिनिधि यही हैं। कांशीराम के चिंतन में जोर ब्राह्मणी व्यवस्था में निहित विषमता एवं उसमें बहुजनों की हीन स्थिति उच्च जातीय विशेषधिकार के साथही सत्ता प्राप्ति करने हेतु संगठित बहुजन समाज के निर्माण पर भी। इस लक्ष्य हेतु वे चाहते थे कि बहुजन न केवल एक भाषा

बोलने वाले (अपनी सरकार की स्थापना की भाषा) राजनीति द्वारा संबद्ध हो, एक दुसरे से भाईचारे की भावना से मिले और साथ रहें।[20]

राजनीतिक शक्ति से शासन–प्रशासन में भागीदारी संभव

कांशीराम संविधानवाद और धर्मनिरपेक्षतावादी थे मानवीय समता, संसदीय लोकतन्त्र में विश्वास करते थे।[21] उनका सार्वजनिक जीवन बहुजनों की संवेदनासे जुड़ा था। उनका बहुजनों को संगठित और जागृति करना, जीवन का मिशन रहा। उनका विश्वास था कि केवल बहुजन ही बहुजन का नेतृत्व कर सकता है, इस लिए इनका स्वयं राजनैतिक दल होना चाहिए जो तीसरी शक्ति या नियन्त्रण कारी या संतुलनकारी भूमिका में होनी चाहिए। उनका विश्वास रहा है कि राजनैतिक शक्ति द्वारा बहुजन अपनी पीड़ाओं से मुक्ति पा सकेगा। वे मानव–मानव के बीच सभी भेदभाव के विरूध्द थे। मनुष्य की अस्मिता गौरव और उसका आत्म सम्मान, उन के विचारों का महत्वपूर्ण भाग रहा।

संदर्भ –

1 हरनोटिया जसराम, समता के स्तंभ बाबासाहेब और बाबूजी, नवभारत प्रकाशन, 2005, पृ.15.
2. कांशीराम, चमचा युग, समता प्रकाशन, नागपूर, 1998, पृ.46.
3. सिंह आर.के., कांशीराम और बी.एस.पी., गोविन्द वल्लभ पन्त सामाजिक विज्ञान संस्थान, इलाहाबाद, 1994, पृ.5.
4. आर. के. सिंह, उपरोक्त पृ. 8.
5. नैमिशराय मोहनदास, बहुजन समाज, नीलकंठ प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ. 15–16.
6. भारत सरकार विधि न्याय और कंपनी मंत्रालय, भारत का संविधान, 1991, पृ. 5.
7. नैमिशराय मोहनदास, बहुजन समाज नीलकंठ प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ.16.
8. राजन अम्बेथ, माई बहुजन समाज पार्टी, एबीसीडीई पब्लिकेशन, 1994, पृ.2.
9. सतनाम सिंह, बहुजन नायक कांशीराम, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005, पृ.45.
10. कांशीराम, बहुजन संगठक, नई दिल्ली, 27/2/1989
11. अभयकुमार दुबे, कांशीराम, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997पृ.15.
12. अभयकुमार दुबे, उपरोक्त, पृ.16.
13. नैमिशराय मोहनदास, उपरोक्त, पृ.10.
14. एच.एल.दुसाध, सामाजिक परिवर्तन और बी.एस.पी., सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005 पृ.19.
15. कांशीराम, चमचा युग, समता प्रकाशन, नागपूर, 1998 पृ.126.
16. अम्बेथ राजन, माई बहुजन समाज पार्टी, उपरोक्त, पृ.32.
17. कांशीराम, बामसेफ एक परिचय, चन्डीगड़, 1981, पृ. 5.
18. थोरात सी.पी., कांशीराम, शिवम प्रकाशन, पुणे, 2005 पृ. 51
19. नैमिशराय मोहनदास, उपरोक्त, पृ. 30
20. आर. के. सिंह, उपरोक्त पृ. 26
21. चंगोले पी.एस., बहुजनों भारत के शासक बनो, रविदास प्रकाशन, नागपूर, 2002, पृ. 22